Early Hindi Retreat, St. Petersburg 2019

Text proposed by Monika Horstmann

Prithīnāth: *Śrī Manasthaṃbha-śarīrāsādhāra-graṃtha-jogaśāstra*

(The *yoga-śāstra* consisting of the book ‘Basis of hope for the body propped on the mind’)

Edition based on MS. Sharma 3190, fols. 639v–642v, where it figures as *granth* no. 27. No emendation of missing or superfluous *anusvāra* has been made.

Abbreviation: GopS = Gopāldās, *Sarbaṅgī*

[639v] दरिया भीतरि घर करै, उश्न मांहै मेरा षेल।
इसी जुगति दीपक रचै, जहां कछु बाती न तेल॥ १॥
तेल बिनां दीपक भया, अग्नि बिहूंणी झाल।
प्रिथीनाथ कहै सोई मिल्या, जिनि ब्रह्मंड रच्या पाताल॥ २॥
आकास बाङी नीपजै, बिन बेली सरि फूल।
सीगी नाद धुनि उपजी, मिट्या भ्रंम का सूल॥ ३॥
जब चंचल मनसा थिर भई, प्रिथीनाथ चंचल थीरं।
अंधियारै दीपक भया, सो पद भया सरीरं॥ ४॥
जिस नव लष तारे थिर भये, गगन रचीले बागु।
बिण बेली फल उतरै, तब देषि हमारे भागु॥ ५॥
माली सींचै मूल, अग्नि मैं बेली ठंई।
प्रिथीनाथ मेरा हरि स्यूं हेत, जहां सदा श्रुति बाढै नई॥ ६॥
पांणी महकी अग्नि झल, झल दाझै काष्ट रहै।
प्रिथीनाथ मेरा तहां श्नांन, जहां गंगा फिरि पछिम बहै॥ ७॥
गंगा चढी अकास, संमंद समांणा बू[द] मै।
मेरा क्यंचित तहां निवास, जहां कोटि किरंणि सूरिज तपैं॥ ८॥
पंजरि बिलंबै श्वास, मूंल जीति त्रिमल हूवा।
सहजि भया परकास, नहीं सोवत शुंपिनां जीवत मूवा॥ ९॥
शुपिनां गया बिलाइ, जहां पंषी पवनन न संचरै।

प्रिथीनाथ तिस बनि गया, जहां कांन्ह सहित गोवल चरैं॥ १०॥

जुरा मरंण ब्यापै सदा, सो कांन्ह नहीं शुंनि पंडित।

कांन्हं कृश्न अलष पुरिष [MS damaged], [640r] औतार नहीं षंडित॥ ११॥

धूवां सेती मन रंगे, जप तप सब बिसाइ।

मेंरै बालसंनेही रांम है, जब आइ मिलै गढ राइ॥ १२॥

पांचौ ईद्री रंग लाइ, नेत्र षुले अनंत।

सबै धरंम संमिता भये, जब मन राषै जंत॥ १३॥

हस्ती कहा मैमंत, सीस जिनि अंकुस लीया।

अलपजीव आदमी, तिनि बंधि अपनैं बसि कीया॥ १४॥ (GopS 79.29)

ता तैं उदमंत मंन मैंमंत, कठिन काहू बसि हूवा।

किनिहीं जीति न सक्या, जगत सब कलपत मूवा॥ १५॥ (GopS 79.30)

के कासी करवत लेइहि, धूंम पंचा अग्नि साधहिं।

तौ भी मन बसि नांहि, जौर[1] नौग्रह आराधहि॥ १६॥ (GopS 79.13)

भावै झपा पातु लेई, सीस केदारि चढांवैं।

तौ भी यहु मंन कंठिन, गुरू बिन ठांवं न आवै॥ १७॥ (GopS 79.14)

प्रिथीनाथ अनंत मुनि, कोटि केइ पचिहारे।

इनि मंन्य सब जगु गिल्या, कहा पंडित बेचारे॥ १८॥ (GopS 79.15)

जिनि यहु चंचल बसि कीया, ता तहि[2] बडा न कोइ।

ते स्यंभरूप पूरंणकला, जिनि मंन जीत्या होइ॥ १९॥ (GopS 79.32)

चंदनहूं संगि कास्ट, तिनिहूं प्रमल अधिकाई।

जाति भेद कुल मिट्या, भींन कछु कथ्या न जाइ॥ २०॥

तिस ठांइ इहै उपजै, भगति का भेदहि बूझै।

अंधकार सब मिटै, आप आपणपा सूझै॥ २१॥

प्रिथीनाथ साध पुरिस की बडी सगाई।

दरसंण तैंहिं पद हूवा, अलपजीव न गति पाई॥ २२॥

भाग बिनां क्यूं पाईये, साध पुरिस का संग।

मलिण प्यंड त्रिमल भया, फेरि पलट्या रंग॥ २३॥

---

[1] जौर] जै रु

[2] ता तिहि] ताातहि; GopS ता तैं हि

कहा जौ दरपंन मंजिये, अधिक कीजै उजलाई।

उपरि सुष सब देषिये, माँहैं का मैल न जाई॥ २४॥

इह गति सब संसार, सबै बाहर कौं जोवंहि।

भीतरि मल ऐ जटि रहे, ज/त/न करि जाहि न षोवंहिं॥ २५॥

~~चंचल का ब~~[…] ~~फेरि निहःश्चल~~[3] पैं घटि आवै।

प्रिथीनाथ कहि सं[x]यहुं, सहजैं गु[640v]रू बतावै॥ २६॥

चंचल का का बल रहै, फेरि[4] निःश्चल होइ बैसै।

अंधकार बिप्रीति[5], तहां दीपक ले पैसै॥ २७॥

यहु भगति भेद ब्यंदहि नहीं, धोषै सौषै जीव।

ते बपुरे यूंही गये, जैसैं दूध बिणठै घीव॥ २८॥

निस दिन कथणी कथैं, अरथ सबदही[6] लावंहि।

सींचैं पोषैं सदा, ता का मरंम न पावंहिं॥ २९॥

प्रिथीनाथ सरीर सही गति, या गति कोई न जांणैं।

षट दरसंन सब पूछिया, सबै मिथ्या करि मांनै॥ ३०॥

जौ परि मंनिषा देह गंदी[7], तौं भींटि क्या सोचौ लीजै।

गंदे[8] तन कूं न्यौंति, कहा पादारघ दीजै॥ ३१॥

झूठे कूं धन सौंपि कहौ धूं[9] कौंणैं लीया।

पूंजीहूं की हांनि[10], बीज जब कालरि दीया॥ ३२॥

प्रिथीनाथ अंधा घट तेहु, जिनि पैं अणसमझे का बोल।

इह पशु हाथि मंणिक पड्या, तौ क्या जांणै मोल॥ ३३॥ (GopS 110.3)

---

[3] The copying error caused by slipping in v. 27ab was effaced by the scribe, but the correction not supplemented with the correct text.

[4] फेरि] hypermetrical

[5] Line hypometrical

[6] साबदही] सबदेही

[7] देह गंदी] गंदी देह

[8] गंदे] गदे

[9] कहौ धूं] No *daṇḍa* after *kahau*, *dhūṃ* representing a correction; starting from *dhūṃ*, v. 32b is hypometrical by two morae, perhaps to be corrected as *dhūṃ kā*….

[10] Hypometrical by two morae.

देही बिनां न धरंम, देह बिनां न को बड दाता।

देही बिणां न धनु, देह बिण बंध न भ्रांता॥३४॥ (GopS 110.4)

देही बिणा न स्यंगार, हार कंवनै गलि मेल्है।

देही बिणां न बंशु, कवन घरि आंगणि षेलै॥३५॥ (GopS 110.5)

देही बिणां न तपु, कवन कहिये सिंन्यांसी।

देही बिणां न राज, कवन पुर पटंण बासी॥३६॥ (GopS 110.6)

देही बिनां न ब्यास, कवन भाग्यौतहि बांचै।

देही बिनां न बिश्न, कवन भगत होइ नाचै॥३७॥

देह भयां आंनंदु, देह बिनास्यां सब रोवंहि।

ता देही कूं अंध मिथ्या करि जोवहिं॥३८॥

या देही बिणां जप तप नहीं, देही बिनां न ध्यांनं।

देह गया शुणि पंडिता, कहौहु कहां भगवांन॥३९॥

या देही कै काजि सिलह सिरि टोप बणांवहिं।

ऐंसैं रिछ्या करैं, संगि सिरि घाव न आवंहि॥४०॥

रछि[पा]ल [641r] अतिघणां, जुथ हस्तिन के ठाढे।

आसि पासि पाहरू राषे, जतन कीजैं अतिगाढे॥४१॥

पहिरा देत न टलंहि, मेह बरसतहीं भीजंहिं।

ऐते जतन उपाइ, सबै जीवंन के कीजंहि॥४२॥

बंके कोट चिणाइ, बिषमं बंधहि दरवाजा।

धन करि संचै भंडार, सबै जीवन के काजा॥४३॥

ऐते जतंन करंत, कोटि केते पचि बीते।

काया मांहि बड चोर, जतन करि काहू न जीते॥४४॥

काया जीतन काज, गुरू कूं श्रवरस दीजे।

धंन संपति परतजि, जुगति जीवन पद लीजै॥४५॥

जीवन पद कै काजि, बहुत राजनु घर छाडे।

सतगुर दीया सहाइ, भ्रंमंतहिं डूबत काजे॥४६॥

प्रिथीनाथ सरीर सहेत, ना देवत हुवा।

इहै बुधि उपजी बिनां, जगत सब सकलपत मूवा॥४७॥

या नर देही नागा नहीं, समझे कूं कविलास।

तब लग डाव न चूकिये, जब लग पंजरि स्वास॥४८॥ (GopS 110.9)

जै परि कूङ कपट हरि भजंन, कपटमुषि संत कहांवैहिं।

तौ भी मुलमां जांणि, अधिक जौ बांनी लांवंहि॥४९॥

कपट करैं ब्यौहार, सेवा राजन घरि मांडंहिं।

अति तौउ बिग्रह, कपट धन राइ न छांडहि॥५०॥

कपट नांव कहि बूडिये, सत्य सुमृति गोब्यंद मिलै।

प्रिथीनाथ बिचार बिन, या कपट भगति की जौ चलै॥५१॥

जैसैं उजल हेम, कस्यां कालिमां न लागै।

ऐसैं त्रिमल साध, कस्यां तहि दूरि न भागै॥५२॥

नांम कबीरहि देष, भगति प्रहिलादहि चीन्हीं।

आइ /पङी/ बिप्रीति, तबहीं प्रतंग्या दीन्हीं॥५३॥

भगति मुक्ति भरपूर, जिनि यहु संधि पिछांणी।

नहीं तौ मंनरंज जुगति बिन सबै कहांणी॥५४॥

प्रिथीनाथ कठिन भगति यहु, कोई बिरला साधू जांणै।

अ[641v]णसमझे बैकुंठ पद, सबै बातनही बषांणैं॥५५॥

रांम नांम मुषि बोल न आवै, मूंठी गह्या नहीं जाइ।

यहु तेज पुंज सारंगधर, बिरलै हिदैय समाइ॥५६॥

हीरा बपुरा कहा, जबै बैरागर आया।

जप तप तीरथ कहा, जबैं घटि गोब्यंद आया॥५६ (!!)॥

तसकर कौ कहा चलै, जबै ईद्री बसि कीन्हां।

बिधि निषेद उठि गया, जबैं फिरि आत्म चीन्हां॥५७॥

लोहा का मंत मिट्या, जब हीर स पारस लागा।

दीपक झूठा पड्या, जबैं अंधियारा भागा॥५८॥

वार पार मिटि गया, जबहीं दरिया बसि कीया।

तन तजि भगा काल,पूरिष जब मरि करि जीया॥५८॥

प्रिथीनाथ निसंक ते, जिनि कै हरिपद भिद्या सरीर।

ते पुरिषा जुगि जुगि रहे, जब लग चंद देवाकर थीरं॥५९॥

वै मलिनरूप कबही नहीं, दिन दिन उजल हूंत।

अंम्रितरस भगवंत, शुष मैं सदा बिहंत॥६१॥ (GopS 16.28)

उदिम करत न देषियैं, निस दिन सोवत जाइ।

इहै अचंभा जगु मै, ये भिष्या किस घरि षाइ॥६२॥ (GopS 16.29)

जै मांगै तौ कल्पनां, देत न दीसै कोइ।

जिन कै धन, ते द्रुबला, वो दिन दिन मोटा होइ॥६३॥ (GopS 16.30)

प्रिथीनाथ प्रष मुनि, क्षिन क्षिन नांना रंग।

ऐ लछिन अवधूत के, तन मन होइ न भंग॥६४॥

इम देह मंध्ये प्रांण, सीप मांहि मोती का बास।

तबहीं बस्तर[11] पाइयै, जबहिं सेइ येक पासं॥६५॥

करता कूङ न होत, बस्त जिनि इस बुधि चीन्हीं।

जे जे जहां नीपजै, मथन करि प्रगट कीन्हीं॥६६॥

तन मन कीये काथ, कहौहु इस मांहि क्या झूठा।

जिसि कूं कछु षबरि न पडी, घर जागतहीं मूंठ॥६७॥

प्रिथीनाथ बमेक बिन, पंडित क्या कहिये।

झूठे के संगि लागि, कहा धोषै मैं बहिये॥६८॥

जीवंत को [642r] समझै नहीं, मुवां न कहैं संदेस।

जा कै तन मन स्यूं प्रचौ नहीं, कहु पंडित ता कौ कौंण धरंम उपदेस॥६९॥ (GopS 47.54)

सबै अविद्या जांणि, जे भ्रंम की गांठि न छूटै।

तबहीं भगति[12] हरि भंजंन, जबहीं यहु शुत्र न टूटै॥ ७०॥ (GopS 47.55)

तब देही यहु नीपजै, जुगति षेती करि जांणैं।

जे यहु झूठ करि गिणैही, कवन धनु धरंमहि आंणैं॥७१॥

प्रिथीनाथ बमेक बिण, कोई जीव तिरत न देषा।

ए पोथा पढि पढि सब मुवां, कहीं संमि भया न लेषा॥७२॥

श्रुगं मृति पाताल, तहां का अर्थ बषांणैंहिं।

या काया मांहिं बड चोर, तास का मरंम न जांणंहि॥७३॥

देही का गुंण क्या कहूं, जा महि स्यंभू कला की जोति।

तहां कलह कलेस न संचरै, जिस घटि या बुधि होति॥७४॥

---

[11] The translation takes *-ra* in *bastara* as an enclitic variant of *aru*, 'and, furthermore', here left untranslated.

[12] भगति] MS. Sharma भगत जब

तब दीपक थिर बलै, जब फिरि करि पवन चलावै।

पांणी भीतरि पैसि, सीचि करि अग्नि जमावै॥७५॥

बिण मुष अभषा भषै, सब्द शुंणिबा बिण कांनं।

बिण पांवनि प्यंगुला, थाइ बिलंब्या असमांन॥७६॥

प्रिथीनाथ अंगंम सब्द, कोई बिरलै घटि आवै।

तब गोब्यंद आइ मिलै, जबहीं या अरथहि पावै॥७७॥

महापुरिष इहै लषहि, अवर कथणी कछु नांहि।

ते पुरिषरूप अवतार, आइ प्रगटे जगु मांहि॥७८॥

धनि शु षेत्र, धनि ते नर, जहां पुरिष बिलंबे आइ।

जिस धोषै लाग्या जगु जलै, ता तैंहि षिंण मैं तपति बुझाइ॥७९॥

धरती मांहि सब नीर, धात सब प्रबत मांही।

काया मांहि कविलास, लषै तौ दूरि न जांहीं॥८०॥

तिसं तैं इहै उपजै, पुरिष जब मरि करि जीवै।

अग्नि करै अश्नान, गंगंन चढि अंम्रित पीवै॥८१॥

प्रिथीनाथ पुरिष भये, जहां पद प्रचा प्रतीति।

भयौ उदौतु आनूंप, जबहीं मन ईद्री गुंन जिति॥८२॥

तहां कोटि किरंणि रवि उगवै, फीटि गया अंधियार।

यहु भई शुहागं[642v]नि बापुरी, जब आइ मिलै भ्रतारं॥८३॥

सांति[13] समाधि न होइ, पंथ इत उत के गाहौ।

मन कौं जीति न सकैं, मुक्ति बातनि हीं चाहौ॥८४॥ (GopS 79.12)

नां देष्या नां शुण्यां, कहैं अंणषाये मीठौ।

तिन कौं यहु तन झूठ, जिन यहु पंथ न दीठौ॥८५॥

जैंसैं बील षोदत धन फब्या, पशुवा यहु निधि न जांणैं।

ता तहिं अधिक पशु, देह कूं झूठ बषांणै॥८६॥

जबहीं जन्म तब गाइयै, मरै तौ पूरा रोज।

तिस देह धर्यां बैकुंठ पद, ता का कांइ बिसारहु षोज॥८७॥ (GopS 110.7)

जिन की बिद्या पढत हौ, जै तिन कूं चीन्हत नांहि।

वै सत्य मांहि, कबहूं नहीं, प्रतषि जंगल मांहि॥८८॥ (GopS 47.53; GopS 63.39)

[13] सांति] MS. Sharma स्वांति

परंम दे/व/ निरंजनं, महादेव स्यंभू रुपेण, मंछिंद्र गुरू गोरषनाथ।

वो का[?X[14]]र जोग धारणं, श्री प्रिथीनाथ॥ ८९॥

वक्ता च भवे ज्ञांनी, श्रुता मोक्षि लभ्यते।

वक्ता श्रुता न जानांमि, वृथा तस्य जीवनं॥

इति श्री प्रिथीनाथ शुत्रधारे मंत महापुरांणे॥ सिधिनांम श्रीममस्थंभसरीरासाधारग्रंथ॥ जोगसास्त्रं समापतं॥ ॥२७॥

[14] Half-visible sign in the margin.